पाठ्यक्रम - चार वर्षीय पूर्व स्नातक कार्यक्रम

विषय - राजनीति शास्त्र

पाठ्यक्रम की प्रकृति - डी.सी.-2

पत्र का नाम - भारत में राष्ट्रवाद

शीर्षक - द्विराष्ट्र सिद्धांत : विभाजन पर मंत्रणाएँ

मूल लेखक - सुजीत ठाकुर, सहायक प्रोफ़ेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

द्विराष्ट्र का सिद्धांत : विभाजन पर समझौता वार्ता

अनुक्रमणिका

द्विराष्ट्र का सिद्धांत

द्विराष्ट्र का सिद्धांत और पाकिस्तान की मांग:

रहमत अली और पाकिस्तान का वैचारिक आयाम

विभाजन का समझौता

कांग्रेस मंत्रिमंडल का त्यागपत्र और अगस्त प्रस्ताव

1937 का चुनाव: कांग्रेस और लीग की राजनीतिक जमीन

द्वितीय विश्वयुद्ध का समापन और संविधानिक गतिरोध

मंत्रिमंडलीय शिष्टमंडल और विभाजन की समझौता वार्ता

3 जून 1947: विभाजन की रणनीति

निष्कर्ष

संदर्भ

द्विराष्ट्र का सिद्धांत : विभाजन पर समझौता वार्ता

इतिहासकारों ने 1947 के भारत-पाकिस्तान विभाजन को अलग-अलग ढंग से विश्लेषण करने का प्रयास किया है। राष्ट्रीय इतिहासकारों जैसे कि बिपिन चंद्र आदि ने ब्रिटिश भारत के विभाजन की जिम्मेदारी मुस्लिम लीग की सांप्रदायिक राजनीति व ब्रिटिश सरकार की विभेदकारी नीति को माना है। इनका मानना है कि विभाजन मुख्य रूप से 1930 के बाद मुस्लिम लीग की सम्प्रदायवादी राजनीति, ब्रिटिश सरकार का शह, मुस्लिम लीग की सत्तालोलुपता व भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कुछ दक्षिणपंथी नेताओं की महत्वाकांक्षा का परिणाम है। मिशुरल हसन जैसे इतिहासकार ने अपनी पुस्तक 'इंडियाज पार्टिशन' में इस विचार को आगे बढ़ाया है।

संशोधनवादी इतिहासकारों के विचार स्थापित ऐतिहासिक तथ्य से सहमति नहीं रखते और पाकिस्तान के जनभावना व वहाँ के विचारों की तरफ झुका दिखता है। इनका मानना है कि विभाजन मुख्य रूप से कांग्रेस के अंदर दक्षिणपंथियों के उग्र विचारधारा, सांप्रदायिक हिन्दू राजनीति व मुस्लिम लीग का अलग-थलग करने की राजनीति का परिणाम था। हम्जा अलवी, आयशा जलाल व याशमीन खान जैसे इतिहासकार इस विचारधारा के मुख्य समर्थक हैं। हम्जा अलवी का मानना है कि जिन्ना द्वारा पाकिस्तान की मांग धार्मिक आधार पर आधारित न होकर, धर्मनिरपेक्षता पर आधारित थी। याशमीन खान ने अपनी पुस्तक द ग्रेट पार्टिशन: द मेकिंग आफ इंडिया एंड पाकिस्तान में विभाजन की जिम्मेदारी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा जिन्ना की मांगों को नहीं मानने को माना है। वो मानती हैं कि जिन्ना द्वारा

पाकिस्तान की मांग मुसलमानों के आत्मनिर्णय के अधिकार से जुड़ी हुई मांग थी। आयशा जलाल का मानना है कि पाकिस्तान की मांग मुसलमानों के लिए एक भू-क्षेत्र से अधिक उनकी भावनाओं से जुड़ा हुआ मांग था। आयशा जलाल का यह भी मानना है कि जिन्ना पाकिस्तान की मांग को एक हथियार के रूप में ब्रिटिश सरकार व भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के विरुद्ध इस्तेमाल करते थे। पाकिस्तानी इतिहासकार विभाजन के लिए लार्ड माउंटबेटन को मुख्य रूप से जिम्मेदार मानते हैं। उनका मानना है कि यदि माउंटबेटन ने एक निष्पक्ष गवर्नर जनरल की भूमिका निर्वाह की होती तो शायद विभाजन रूक सकता था।

संरचनावादी इतिहासकार जैसे की जी.डी. खोसला, सतीश सब्बरवाल व ज्ञानेन्द्र पाण्डेय आदि विभाजन का कारण 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश भारत में हो रहे सामाजिक सांस्कृतिक पुनर्जागरण आंदोलन में देखने का प्रयास करते है। उनका मानना है कि इस समय हो रहे सामाजिक सांस्कृतिक आंदोलन मुख्य रूप से ब्रिटिश व्यवस्था के प्रभुता के विरुद्ध भारतीय जनमानस का नैतिक चेतना प्रदान करने के लिए हो रही थी। परंतु यह आंदोलन जो प्रारंभ में हिन्दू और मुस्लिम बुद्धिजीवियों व सामाजिक सुधारकों के द्वारा अपने-अपने समुदाय को नैतिक चेतना जगाने के लिए हुई थी वह कालन्तर में राजनीतिक विघटनकारी के रूप में सामने आयी। हिन्दू समाज सुधारकों ने भारत को ब्रिटिश साम्राज्य के समक्ष गौरवान्वित करने के लिए प्राचीन भारत के शासकों को जहाँ आदर्श बनाने की कोशिश की, वही मुस्लिम समाज सुधारकों ने मध्यकाल को अपना आदर्श बनाया। उत्तर भारत में गौ-रक्षा अभियान, पश्चिम भारत में शिवाजी का गुणगान और आर्य समाज आंदोलन द्वारा शुद्धि आंदोलन ने मुसलमानों को सामाजिक रूप से हिन्दुओं से अलग करने लगा

था। वही मुसलमानों द्वारा शुद्धि आंदोलन के विरुद्ध पुनः इस्लामीकरण की बातें व मुगलकाल को मुस्लिम काल के रूप में चर्चा आदि ने हिन्दू और मुसलमानों के बीच पहचान की राजनीति को और आगे बढ़ाया, जो धीरे-धीरे बढ़कर प्रतिद्वंद्वी राजनीति का रूप 20वीं शताब्दी में ले लिया। गांधी द्वारा रामराज्य की बात करना, स्वराज्य व सांकेतिक हिन्दू देवी देवताओं का प्रयोग करना, सभा हिन्दुओं के धार्मिक स्थानों व अन्य सामाजिक सांस्कृतिक स्थलों पर करना आदि ने भी मुसलमनों को हिन्दुओं से दूर करता चला गया और इन सबका मिलाजुला परिणाम विभाजन के रूप में सामने आया।

इसी दूरी को बढ़ाने में ब्रिटिश सरकार द्वारा 'फूट डालो और शासन करो' की राजनीति ने और मजबूती प्रदान किया। दूसरी तरफ, व्यापार और उद्योग में ब्रिटिश व्यवस्था के हावी होने के कारण हिन्दू और मुसलमानों का पर्याप्त अवसर प्राप्त नहीं हो पा रहा था और सरकारी सेवा जीवन-यापन का एक मात्र साधन बनकर रह गया था। शासकों ने इसका प्रयोग इन दोनों समुदायों के बीच आपसी दूरी और ईर्ष्या को और अधिक बढ़ाने के लिए किया। संसाधन के अभाव और विकल्प के रूप में जीवन यापन का एक मात्र साधन सरकारी सेवा ने दोनों समुदायों के बीच एक नये प्रतिस्पर्धा को जन्म दिया। विलियम हन्टर द्वारा सर सैयद अहमद खान को मुस्लिम सुधार आंदोलन प्रारंभ करने व मुसलमानों को सरकारी नौकरी में अधिक से अधिक भागीदारी के लिए प्रोत्साहित करना प्रारंभ किया। ताकि हिन्दू और मुसलमानों के बीच इस दूरी का और आगे बढ़ाया जा सके। विलियम हंटर ने अपनी पुस्तक 'भारतीय मुसलमान' जो 1871 में प्रकाशित हुई थी, में अंग्रेज शासकों को स्पष्ट संकेत दिया था कि "मुसलमान इतने दुर्बल हो चुके हैं कि वह अब विद्रोह नहीं कर सकते" और हिन्दुओं में अधिकाधिक राजनीतिक जागृति उनके ब्रिटिश

सरकार के सहयोगात्मक नीति के कारण ही आई है। अतः उन्होंने मुसलमानों से ब्रिटिश सरकार से सहयोग की बात कही। हंटर की बातों को ध्यान में रखते हुए ब्रिटिश शासकों ने थियोडर बैक जो एम. ए. ओ. अलीगढ़ कालेज के प्रथम प्रिंसिपल बने, उन्हें ब्रिटिश नौकरशाही ने विशेष प्रयोजन से भारत भेजा था। ताकि मुसलमानों व अंग्रेजों के बीच जो दूरी वहाबी आंदोलन व 1857 के आंदोलन के कारण आया था उसे कम किया जा सके। साथ ही साथ हिन्दुओं के बढ़ते राजनीतिक जागृति, शिक्षा व आर्थिक उत्थान के विरुद्ध एक प्रतिद्वंद्वी समूह खड़ा किया जा सके। यह रणनीति विशेषकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से पूर्व ही ब्रिटिश नौकरशाही द्वारा निर्धारित की ली गई थी। इस रणनीति को कार्यरूप प्रदान करने के लिए 1853 से 1860 तक बम्बई के गवर्नर द्वारा उद्धृत पंक्ति जो पुरानी रोमन कहावत थी, 'बाँटो और राज करो' की नीति का सैद्धांतिक मान्यता प्रदान की गई। यह नीति सही मायने में ब्रिटिश साम्राज्य के लिए वरदान सिद्ध हुआ और भारत के लिए अभिशाप।

उपरोक्त विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि दो राष्ट्रवाद का सिद्धांत जिसे हम लाहौर के अधिवेशन में मुहम्मद अली जिन्ना द्वारा कहे गये शब्द कि हिन्दू और मुसलमान पृथक-पृथक जातियाँ हैं उसे मानते आये हैं परन्तु वास्तविकता यह है कि हिन्दू और मुसलमानों के बीच अंतर्समुदायात्मक विरोध की रणनीति ब्रिटिश शासन व्यवस्था ने 19वीं शताब्दी के उतरार्द्ध में ही निर्धारित कर दी थी जब राष्ट्रीय आंदोलन अपने प्रारंभिक दौर में था। फिर भी राष्ट्रवादी इतिहासकार विभाजन का कारण लाहौर अधिवेशन में जिन्ना द्वारा कहे गए शब्द 'हिन्दू और मुसलमान' वस्तुतः नियमनिष्ठ अर्थ में धर्म नहीं है, अपितु वास्तव में भिन्न और स्पष्ट सामाजिक व्यवस्था है " को मानते आ रहे हैं। संरचनावादी इतिहासकार यद्यपि इससे पूर्ण रूप से सहमत नहीं हैं।

उनका मानना है कि विभाजन की जड़ भारत में 18वीं और 19वीं शताब्दी में हो रहे सामाजिक-धार्मिक पुनर्जागरण आंदोलन, ब्रिटिश भारत की 'बांटो और राज करो की नीति' और मिन्टो मारले सुधार 1909 को मानते हैं।

द्विराष्ट्र का सिद्धांत

नेशन (राष्ट्र) शब्द की व्युत्पति शब्द नेशियों, अथवा 'नेट्स' से हुई है, जिसका अर्थ 'पैदा होना' होता है। यह एक लैटिन शब्दावली है जिसकी व्याख्या 'वंशीय' अथवा 'नृवंशीय' अर्थ में किया गया है। फलतः व्युत्पत्ति की दृष्टि से राष्ट्र से अभिप्राय उन लोगों से है, जिनका विकास नस्लीय समानता के आधार पर हुआ है। अर्थात ऐसे लोग जो रक्त संबंध द्वारा एक राजनीतिक समाज में परस्पर संबंधित हो। राजनीतिशास्त्री वर्गेस एवं लीकाक ने राष्ट्र की परिभाषा 'वंशीय' भाव के आधार पर की है। परंतु वर्गेस सामान्य वंश परम्परा का राष्ट्र का आवश्यक तत्व नहीं मानते। नृवंशीय एकता से उनका तात्पर्य उस जनसंख्या से है, जिसकी सामान्य भाषा और साहित्य, सामान्य परम्परा और इतिहास, सामान्य रीति-रिवाज और उचित और अनुचित की सामान्य चेतना को। भारत में हो रहे सामाजिक पुनरात्थानवादी आंदोलन ने उस रूचि में स्पष्ट विभेद खड़ा कर दिया था। यद्यपि हिन्दूऔर मुसलमान इस क्षेत्र में हजारों वर्षों से एक साथ शांति और सद्भावना से रहे रहे थे। परंतु पुनरुत्थानवादी आंदोलन और सांप्रदायिक राजनीतिक प्रतिद्वंद्वता ने इस शांति और स्थिरता को 1940 के दशक आते-आते पूर्ण रूप से अस्थिर कर चुका था।

1940 के दशक में ब्रिटिश भारत की कुल जनसंख्या 38.9 करोड़ थी, जिसमें 25.5 करोड़ हिन्दू थे, 9.2 करोड़ मुसलमान, 63 लाख इसाई, 56 लाख सिख,

और अन्य छोटे-छोटे मान्यताओं व धर्मों में विश्वास करने वाले लोगों की संख्या थी। आज का उत्तर प्रदेश इस समय का यूनाइटेड प्रोविन्स 'ब्रिटिश भारत के विभाजन' की मांग का केन्द्रस्थल था। उस समय वहाँ मुसलमानों की संख्या 16 प्रतिशत थी। भारत का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं था जहाँ किसी विशेष संप्रदाय के लोग ही रहते हों। हर क्षेत्र में सभी धर्मावलाम्बी के लोग थे और वह भी वर्षों से रहे रहे थे। फिर ऐसी कौन सी विशेष स्थिति आयी जिसके कारण ब्रिटिश भारत का विभाजन दो स्वंतत्र राष्ट्र भारत और पाकिस्तान के रूप में सामने आया। इसी विशेष परिस्थिति की व्याख्या द्विराष्ट्र के सिद्धांत के रूप में की जाती है। यद्यपि कांग्रेस सैद्धांतिक रूप से दो द्विराष्ट्र के सिद्धांत को अस्वीकार करती रही है और मुस्लिम लीग भारत के विभाजन का कारण द्विराष्ट्र के सिद्धांत को ही मानती है।

द्विराष्ट्र का सिद्धांत और पास्तिान की मांग:

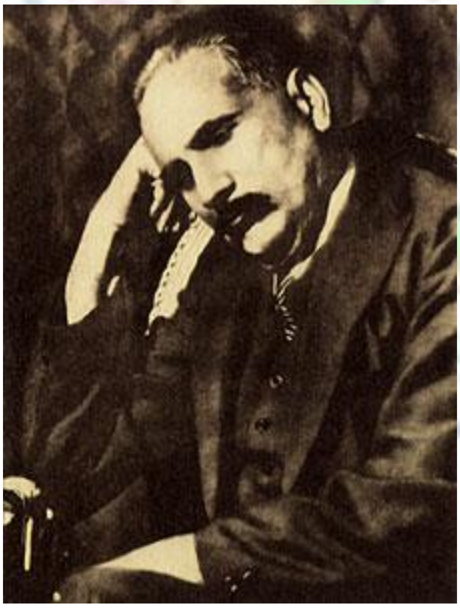

http://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/8a/Iqbal.jpg

प्रायः कवि और राजनीतिक चिन्तक मुहम्मद इकबाल को मुसलमानों के लिए पृथक राज्य 'पाकिस्तान' के विचार का प्रवर्तक माना जाता है। सर्व इस्लाम (चं्द.Pan-Islamism) की भावना से प्रेरित होकर इकबाल ने 1930 के अखिल भारतीय मुस्लिम लीग के अधिवेशन में कहा था, कि यदि यह सिद्धांत स्वीकार कर लिया जाता है कि भारत के सांप्रदायिक प्रश्न का स्थायी हल भारतीय मुसलमान को अपने देश में अपनी संस्कृति और परम्पराओं के पूर्ण और स्वतंत्र विकास का अधिकार है, तो मेरी इच्छा है कि पंजाब, उत्तर -पश्चिमी सीमा प्रांत, सिंध और बलुचिस्तान को मिलकर एक राज्य बना दिया जाए। ब्रिटिश साम्राज्य के अंदर अथवा बाहर, एक उत्तर पश्चिमी भारतीय मुस्लिम राज्य का गठन मुझे कम से कम उत्तर -पश्चिमी भारत में, मुसलमानों का अंतिम लक्ष्य प्रतीत होता है।

ब्रिटिश भारत के विभाजन व मुसलमानों के लिए पृथक स्वदेश जिसे पाकिस्तान कहाँ जाएँ का विचार स्पष्ट रूप से पहली बार 1933 में कैम्ब्रीज के अनुस्नातक विद्यार्थी व पंजाब प्रांत का नागरिक चौधरी रहमत अली के मन में आया। रहमत अली की मौलिक सोच यह थी कि ब्रिटिश भारत को वह प्रांत जहाँ मुसलमानों की बहुलता है उसे भारत से अलग कर एक संप्रभु राज्य का निर्माण किया जाए जहाँ मुसलमानों के लिए अलग संस्कृति व पहचान हो। इसके कल्पना में ब्रिटिश भारत का पंजाब, उत्तर पश्चिमी प्रांत, कश्मीर, सिंध व बलुचिस्तान को मिलाकर भारतीय मुसलमानों का राष्ट्रीय देश होना चाहिए और उस प्रदेश को पाकिस्तान का नाम दिया जाना चाहिए। 1940 के लाहौर अधिवेशन में मुस्लिम लीग द्वारा इसी सोच को स्वीकार कर भारत के बंटवारे की मांग की गई थी। मुस्लिम लीग ने प्रस्ताव पारित करते हुए कहा था "अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का दृढ़ विचार है कि अब इस देश में कोई भी

संवैधानिक योजना सफल और मुसलमानों को स्वीकृत नहीं होगी जो कि निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित न हो - भौगोलिक स्थिति में एक दूसरे से लगे हुए प्रदेश, आवश्यक परिवर्तनों सहित इस प्रकार गठित किए जाए ताकि वहाँ मुसलमान बहुसंख्यक हो जावे जैसा कि भारत के उत्तर पश्चिमी और पूर्वी प्रदेश और उनको मिलाकर एक स्वतंत्र राज्य बना दिया जाए और उनमें सम्मिलित प्रदेश स्वशासी और प्रभुसत्तापूर्ण हो ... इस प्रस्ताव में जो प्रदेश पाकिस्तान में सम्मलित होने थे, उसका विवरण नहीं था। 1940 से लेकर 1947 तक की राजनीति मुसलमानों के लिए एक स्वायत्त प्रदेश या स्वतंत्र देश की राजनीति पर आधारित थी। उसका आधारबिन्दु मुस्लिम बहुल क्षेत्र विशेषकर उत्तर-पश्चिम ओर उत्तर पूर्वी भारत जहाँ मुसलमान बहुसंख्यक थे वहाँ मुस्लिम संस्कृति व मुस्लिम विचारधारा की प्रभुत्ता रहे: इसी प्रश्न को केन्द्रबिन्दु बनाकर मुस्लिम लीग ने 1940 के बाद की राजनीति को आधार बनाया। इसके पीछे दो तर्क दिये गये। मुस्लिम राज्य की अनिवार्यता और दूसरों भारतीय संघीय ढांचा के अंतर्गत उत्तर पश्चिमी भारत का उत्तरपूर्वी भारत को विशेष स्वायत्तता। यद्‌यपि लाहौर प्रस्ताव के समय तक यह बात बहुत स्पष्ट रूप से न तो मुस्लिम लीग के नेताओं के पास थी और न ही आम जनता इस बात पर सहमत थी कि पाकिस्तान का निर्माण, भारत की सीमा से अलग एक क्षेत्र के रूप में होगी। यह बात इससे भी स्पष्ट होती है कि मुस्लिम लीग के नेता ऐसे किसी भी प्रस्ताव पर विचार नहीं कर रहे थे जहाँ मुस्लिम बहुल क्षेत्र है वहाँ से हिन्दुओं या सिखों की आबादी को अन्य क्षेत्रों में विस्थापित कर दिया जाए और जहाँ हिन्दू आबादी बहुसंख्यक हैं वहाँ से मुसलमानों को। सोच ऐसी थी कि जो आबादी जहाँ है वही रहेगी और उनके सामाजिक आर्थिक और सांस्कृतिक आधार वैसी ही रहेंगे। अंतर इतना होगा

कि मुस्लिम बहुल क्षेत्र पाकिस्तान कहलाएँगे और हिन्दू बहुल क्षेत्र भारत (ज्ञानेन्द्र पाण्डे, पृ. 26)

मुस्लिम लीग के लाहैार प्रस्ताव ने चौधरी रहमत अली के कल्पना को और अधिक उड़ान प्रदान की और अपनी सोच को आगे बढ़ाते हुए भारत के उस क्षेत्र को भी उसमें शामिल किया जिसे वह 'बंगिस्तान' का नाम दिया। इस क्षेत्र में वह बंगाल, असम, और ओस्मानिस्तान (दक्कन का हैदराबाद) के क्षेत्र को शामिल किया। अपने पूर्व के विचारों व वर्तमान के विचारों को मिलाकर रहमत अली ने एक नई वैचारिक संकल्पना को जन्म दिया, जिसे वह दीनीया (Dinia) के नाम से परिचित करवाया। दीनीया का अर्थ वह 'पुराने भारत के भाग्य' के अर्थ में करता है, जिसके आधार पर वह यह कहने की कोशिश करता है कि जो वर्तमान ब्रिटिश भारत है अपनी अंतिम साँस गिन रहा है और इसका स्वाभाविक अंत सुनिश्चित है। वह आगे कहता है कि आज जिस भारत की चर्चा हो रही है, वह भारत अपनी स्वाभाविक मौत को प्राप्त कर चुका है। अतः एक नये राष्ट्र राज्य की स्थापना की आवश्यकता है। इसके लिए रहमत अली ने एक नये शब्द 'pakasia' पाकासिया का इस्तेमाल किया जिसका अर्थ वह एक ऐसे ऐतिहासिक क्षेत्र के रूप में करता है जहाँ इस्लामिक संस्कृति की प्रभुता हो (**Historic Orbit of Pakistani Culture**) , (कौशिक राय, भारत का विभाजन पृ. सं. 6)।

रहमत अली का स्पष्ट विचार था कि हिन्दू और मुसलमान मूलभूत रूप से पृथक राष्ट्र अथवा जातियाँ हैं। उसने लिखा था, "हमारा धर्म, संस्कृति, इतिहास, परम्पराएँ, साहित्य, आर्थिक प्रणाली, दाय के कानून, उत्तराधिकार और विवाह हिन्दुओं से मुख्यतः भिन्न हैं। ये भिन्नताएँ मुख्य मूल सिद्धांतों में ही नहीं अपितु छोटे-छोटे ब्योरे में भी भिन्न है। हिन्दू और मुसलमान आपस

में बैठकर खाते नहीं और विवाह नहीं करते। हमारी राष्ट्रीय रीतियाँ, पंचांग यहाँ तक कि खाना और पहनावा सभी भिन्न है।" इसी दर्शन को आगे बढ़ाते हुए अखिल भारतीय मुस्लिम लीग के लाहौर अधिवेशन में मुहम्मद अली जिन्ना ने अपने वक्तव्य में कहा "हिन्दू और मुसलमान जिनके धार्मिक सोच, सामाजिक रीति रिवाज, साहित्य और दर्शन अलग अलग हैं - ऐसी दो जातियों को एक राज्य में इकट्ठे बाँधने से जिसमें एक अल्पसंख्यक हों और दूसरा बहुसंख्यक इससे असंतोष ही बढ़ेगा और राष्ट्र नष्ट हो जाएगा" (बी.एल. ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ. 588-89)

मुस्लिम लीग ने अपने दो राष्ट्रवाद के सिद्धांत को इस रूप में आगे बढ़ाने की कोशिश की कि यह मांग दोनों समुदाय को न्याय दिलायेगा और दोनों समुदाय स्वतंत्रपूर्वक व सदभावनापूर्वक आगे बढ़ सकेंगे। उनका मानना था कि विभाजन वह सत्य है जिसके माध्यम से अल्पसंख्यकों, शोषित व पिछड़ों को उनके अधिकार प्राप्त हो सकते हैं। अतः मुस्लिम लीग ने अपनी राजनीति का आधार 'एकता के लिए विभाजन' (**Unite to Divide)** अपरिहार्य है इस विचार को 1940 के दर्शन की राजनीति का केन्द्र बिन्दु बनाया। जिन्ना, मुस्लिम राष्ट्र के समर्थन में यह विचार रखते थे कि भारत के मुसलमान अपने आप में एक 'राष्ट्र' है। उनका कहना था कि वर्तमान मांग कहीं से भी हिन्दू मुस्लिम अन्तर समुदायात्मक द्वंद्व के आधार पर आधारित नहीं है, न ही यह क्षेत्रीयता व धार्मिकता पर आधारित है, अपितु वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य के अनुरूप है, यहाँ राष्ट्र राज्य का गठन प्रमुख रूप से राष्ट्रीय जनभावना पर आधारित होती है और इस अर्थ में भारतीय मुसलमान अपने आप में एक राष्ट्र है, और अंतर्राष्ट्रीय समुदाय व ब्रिटिश सरकार का यह सत्य स्वीकार करनी चाहिए। (ज्ञानेन्द्र पाण्डेय, पृ. 29)

रहमत अली और पाकिस्तान का वैचारिक आयाम

http://upload.wikimedia.org/wikipedia/en/2/28/Rehmat.jpg

रहमत अली के वैचारिक कल्पना को मुस्लिम लीग ने नया पंख प्रदान किया। और यह पंख हिन्दु-मुसलमान सांस्कृतिक सदभावना को 'हम' और 'वे' में बदल दिया। रहमत अली ने शब्द 'भारत' पर ही प्रश्नचिन्ह खड़ा कर दिया। अली ने शब्द 'भारत' को एक 'मिथ्या संज्ञा' कहा और इसे मुस्लिम संस्कृति के लिए 'संकट' के रूप में व्याख्यायित करने की कोशिश की। उनका मानना था कि वर्तमान ब्रिटिश भारत को 'भारत' कहना अनुपयुक्त है, क्योंकि इंडिया कहने से जाति हिन्दू या हिन्दू संस्कृति का ही बोध होता है। क्योंकि ऐतिहासिक रूप से सिन्धु सभ्यता सनातन सभ्यता से संबंधित है।

सिन्धु सभ्यता से ही शब्द हिन्दू का उद्भव हुआ है, जो कहीं से भी मुस्लिम संस्कृति व सोच को दर्शित नहीं करता। अतः 9 करोड़ मुसलमानों के लिए 'भारत' को अपना राष्ट्र मानना न केवल उनकी संस्कृति, विचारों, धर्मों, रीति-रिवाजों के लिए खतरा होगा, अपितु 25 करोड़ हिन्दूओं की अधीनता व दासता को स्वीकार करना होगा। " इसी सोच को व्यावहारिक रूप जिन्ना के राजनतिक विचार ने द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अपनी 'प्रत्यक्ष कारवाई, के माध्यम से दिया। जिसके कारण गंगा- दोआब की संस्कृति जो सदियों से 'आत्मसात' की संस्कृति बनी हुई थी ने मानव इतिहास का एक काला अध्याय लिखा। कंजरवेटिव से लेकर सभी स्रोतों के अध्ययन के आधार पर इस द्विराष्ट्र के सिद्धांत ने 2 लाख से लेकर 10 लाख लोगों के जीवन का नरसंहार किया (स्टेनी वोलपर्ट पृ. 1) 60 लाख से अधिक लोगा शरणार्थी हो गये और दो शहर दिल्ली और कराची की संस्कृति व सामाजिक संरचना का स्परूप ही बदल गया। अलीगढ़ व लखनऊ जो पाकिस्तान आंदोलन' का धर्म स्थल था, भारतीय राष्ट्रीयता में ही अपनी पहचान तलाशने लगे। उत्तर प्रदेश और बिहार से जो मुसलमान पलायन कर नये राष्ट्र राज्य की ओर बढ़े वह अभी भी अपनी पहचान की लड़ाई 'मोहाजीर' के रूप में लड़ रहे है। पूर्वी पाकिस्तान एक नए स्वतंत्र राज्य बांग्लादेश के रूप में विश्व मानचित्र के सामने आया और पाकिस्तान अपनी पहचान की लड़ाई लड़ रहा है।

विभाजन का समझौता

द्वितीय विश्वयुद्ध के अंत ने जहाँ ब्रिटेन के सैन्य राजनीतिक और आर्थिक क्षमता पर प्रश्नचिह्न खड़ा किया, वहीं भारतीय उपमहाद्वीप के राजनीतिक क्रीड़ास्थल में अभूतपूर्व परिवर्तन देखने को मिला। 1945 से लेकर 1947 के बीच ब्रिटिश सरकार द्वारा दो महत्त्वपूर्ण घोषणाएँ की गई थीं: सत्ता

हस्तांतरण का और राष्ट्रीय सरकार के गठन का। इन दो धोषणाओं ने भारतीय उपमहाद्वीप के राजनीतिक दलों के बीच प्रतिस्पर्धा को एक नया दौर शुरू कर दिया था। 1940 से पूर्व भारतीय राजनीति मुख्य रूप से राष्ट्रीय स्वतंत्रता पर आधारित थीं परंतु द्वितीय विश्वयुद्ध के कारण जो घटनाएँ घटी उसने पिछले तीन और चार दशकों से भारतीय राजनीतिक मांगों को एक नई दिशा दी। दो प्रमुख राजनतिक दल अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जो अपने आपको भारतीय जनमानस का एक मात्र प्रतिनिधि मानती थी और दूसरा प्रमुख दल अखिल भारतीय मुस्लिम लीग को यह स्थापित करने में लगी थी कि भारतीय मुसलमानों का वह एक मात्र प्रतिनिधि दल है कि बीच सत्ता प्राप्ति की होड़ ऐसी चली जिसका अंत विभाजन के रूप में सामने आया। जैसा कि पिछले भाग में हमने लाहौर अधिवेशन और उसके वैचारिक आयाम पर चर्चा किया है, वहीं इस भाग में मुख्य रूप से उन घटनाओं की चर्चा करेंगे जिसके कारण विभाजन अपरिहार्य हो गया। जैसा कि संरचनावादी इतिहासकार व राष्ट्रीय इतिहासकार भारतीय राजनीति में सांप्रदायिकता के विकास के लिए ब्रिटिश शासन व्यवस्था व उसके सांप्रदायिक राजनीति को राष्ट्र को मानते है, वह एक अर्थ में अर्ध सत्य माना जा सकता है। ब्रिटिश शासन व्यवस्था से पूर्व की जैसा कि नीरद सी. चैधरी ने अपनी पुस्तक ‘थाई हार्ड ग्रेट एनार्क ! इंडिया’ में लिखा है कि 18वीं शताब्दी के प्रारंभ में जब मुगल सत्ता पतनोन्मुख थी और मुहम्मद शाह (1729) में शासक था, उस समय जो सांप्रदायिक दंगे शाही मस्जिद के निकट देखने को मिला था, उसका स्वरूप कुछ अर्थ में पुनः 1946-47 में देखने को मिला, जब ब्रिटिश शासन व्यवस्था अपने पतन पर थी। वह लिखते हैं कि जिस प्रकार ब्रिटिश साम्राज्य के अंत में सत्ता के केन्द्र बिन्दु कनाट प्लेस पर दंगे हो रहे थे और पुलिस व

सैन्य व्यवस्था प्रशासक के ओदश के बावजूद मूकदर्शक बनी हुई थी। उसी प्रकार उस समय सत्ता का केन्द्र बिन्दु जामा मस्जिद जो वर्तमान को लालकिला क्षेत्र है, वहाँ भीषण सांप्रदायिक दंगे हो रहे थे और व्यवस्था मूकदर्शक बनी हुई थी (नीरद चैधरी, पृ. 813)।

वर्तमान ऐतिहासिक संदर्भ में, विभाजनकारी राजनीति ब्रिटिश व्यवस्था द्वारा 1880 के दशक में ही प्रारंभ कर दी गई थी। जिसे पहली बार लार्ड रिपन के स्थानीय स्वशासन सुधार और सांप्रदायिक राजनीतिक की सुधार से हम देखते हैं। फिर विलियम हन्टर द्वारा लिखी गई पुस्तक 'भारतीय मुसलमान ' और थियोडर बैक द्वारा सर सैयद अहमद खाँ का मुस्लिम सुधार आंदोलन के लिए प्रोत्साहित करना ओर भारतीय मुसलमान को ब्रिटिश सरकार से सहयोग के लिए प्रेरित करना, कहीं-न-कहीं ब्रिटिश व्यवस्था की राजनीति का ही हिस्सा था। जिसे बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशक में साम्प्रदायिक पृथक चुनाव मंडल के रूप में सामने लाकर विभाजन का बीज हमेशा के लिए बो दिया गया था। 'सांप्रदायिक पृथक चुनाव मंडल' का शाब्दिक अर्थ था कि मुसलमानों के लिए पृथक स्थान का आरक्षण भी उनके चुनाव में केवल मुस्लिम मतदाता ही भाग लेंगे। नये संवैधानिक सुधारों पर विचार हो रहा था। एम. ए. ओ. कालिज अलीगढ़ के प्राचार्य आर्चिवोल्ड के सुझाव पर आगा खाँ एक प्रतिनिधि मंडल लेकर, अक्टूबर 1906 को शिमला में लार्ड मेयो को मिले। वहाँ उन्होंने अंग्रेज शासन व्यवस्था के प्रति कृतज्ञता प्रकट की और संयुक्त चुनाव व्यवस्था पर अपनी चिंता जतायी। प्रार्थना पत्र में यह कहा गया कि मुसलमानों को केवल जनसंख्या के आधार पर स्थानों का आरक्षण नहीं मिलना चाहिए, अपितु यह उनके राजनीतिक महत्त्व और साम्राज्य की रक्षा में की गई सेवाओं के आधार पर मिलना चाहिए। 30 दिसम्बर 1906 को

अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की विधिवत स्थापना हुई जिसका उद्देश्य भारतीय मुसलमानों में अंगेजी सरकार के प्रति राजभक्ति बढ़ाना, उनके आकांक्षाओं और राजनीतिक अधिकारों की रक्षा करना था।

मुस्लिम लीग के इस सोच को जिस अंग्रेजी राजनीतिकार ने मशविदा के रूप में तैयार किया था, उसे संवैधानिक व्यवस्था 1909 के मार्ले मिन्टो सुधार के द्वारा प्रदान की गई। मुसलमानों के लिए पृथक सांप्रदायिक चुनाव मंडल को स्वीकार कर लिया गया और हिन्दू और मुसलमान के बीच एक ऐसी राजनीतिक दूरी की स्थापना कर दी गई जिसे 1940 के दशक में दो पृथक स्वतंत्र राजनीतिक इकाई भी दूर नहीं कर सका। राष्ट्रीय हित की जगह सांप्रदायिक हित पर ज्यादा बल दिया जाने लगा। 1909 में मतदाताओं की संख्या केवल 10 लाख थी, 1919 के सुधार के परिणामस्परूप मतदाताओं की संख्या 70 लाख हो गई, और 1935 के भारत सुधार अधिनियम के तहत मतदाताओं की संख्या 3 करोड़ 60 लाख हो गया। यद्यपि यह भारत की कुल जनसंख्या का 10 से 12 प्रतिशत ही था, परंतु सांप्रदायिकता के जहर को आम जनता तक पहुँचाने के लिए यह संख्या काफी थी। 1932 तक मुहम्मद अली जिन्ना मुस्लिम लीग के निर्विवाद नेता बन चुके थे, और उनकी सोच पूर्ण रूप से सांप्रदायिक हो गई थी। 1930-32 के गोलमेज कांफ्रेंस के प्रभाव ने रहमत अली के सोच को शायद प्रभावित किया होगा और कैम्ब्रिज का यह अनुस्नातक छात्र ने 1933 में अपने वैचारिक सोच में 'पाकिस्तान' राज्य की कल्पना कर दी, जिसे 1940 के लाहौर अधिवेशन में फजलुल हक ने वैधानिक रूप देने की कोशिश की। दो दशकों से जो मुस्लिम लीग राजनीतिक रूप में अप्रासंगिक दिख रही थी, साइमन कमीशन व गोलमेज सम्मेलन के बाद अपनी राजनीतिक प्रासंगिकता को पुनः प्राप्त कर चुकी थी। यद्यपि 1937 के

आम चुनाव में मुसलमानों के लिए 485 आरक्षित स्थानों में से केवल 109 स्थानों पर ही इसे सफलता प्राप्त हुई। मुस्लिम बहुसंख्यक प्रांतों, पंजाब, उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रांत, बंगाल और सिंध में भी उसे अन्य मुस्लिम दलों ने पीछे छोड़ दिया था। कांग्रेस ने बम्बई, मद्रास, यू.पी., बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रांत में पूर्ण बहुमत प्राप्त किया और उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रांत में सबसे बड़े दल के रूप में सामने आयी। मुस्लिम लीग ने बंगाल, असम और पंजाब में कांग्रेस से मिलकर मिली जुली सरकार बनाने की इच्छा प्रकट की और उन्हें आशा थी कि यू.पी. और बिहार में भी उनके सदस्य मंत्रिमंडल में सम्मिलित कर लिये जाएँगे। कांग्रेस जो असाम्प्रदायिकता के लिए गर्व करती थी, वे इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और यह कहा कि यदि मुस्लिम लीग सदस्य मंत्री बनना चाहते हैं तो वे कांग्रेस प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर करे। यह संभवतः कांग्रेस की सबसे बड़ी भूल थी। ऐसा अबूल कलाम आजाद ने अपनी पुस्तक इंडिया विन्स फ्रीडम में लिखा है। जिन्ना ने इस सुझाव को मुस्लिम लीग के विरुद्ध सबसे बड़ी चाल बताया। उसने कांग्रेस के विरुद्ध प्रत्येक प्रकार के आरोप लगाए और कांग्रेस को हिन्दूओं की संस्था बताया जो अल्पसंख्यकों को दबाना चाहती है। पीरपुर के राजा के नेतृत्व में मुस्लिम लीग ने कांग्रेस शासित राज्यों में अल्पसंख्यकों पर हो रहे अत्याचार के लिए एक समिति बनाई और उसके रिपोर्ट को सांप्रदायिक रंग देकर कांग्रेस को बदनाम करने में सफल रहा। जिन्ना ने स्पष्ट शब्दों में कहा कांग्रेस से मुसलमानों को न्याय की आशा नहीं करनी चाहिए।

कांग्रेस मंत्रिमंडल का त्यागपत्र और अगस्त प्रस्ताव

दुर्भाग्यवश सितम्बर 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध की शुरूआत हो गई और अंग्रेजी सरकार ने भारतीय विधानमण्डल में बिना परामर्श किये भारत की

ओर से युद्ध की घोषणा कर दी। कांग्रेस कार्यकारिणी ने इस पर विरोध प्रकट करते हुए प्रस्ताव पारित किया कि भारत की ओर से युद्ध और शांति के प्रश्न का निर्णय भारतीय लोग ही करेंगे ... हम ऐसे किसी युद्ध में सम्मिलित नहीं हो सकते जिसका उद्देश्य साम्राज्यवादी नीतियों पर आधारित हो और जिसका उद्देश्य भारत तथा अन्य स्थानों पर साम्राज्यवाद को दृढ़ करना हो। कार्यकारिणी ने स्पष्ट शब्दों में ब्रिटिश सरकार से मांग की कि अंग्रेजी सरकार यह घोषणा करे कि युद्ध का उद्देश्य क्या होगा ? क्या भारत को स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में व्यवहार किया जायेगा। वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने इस पर कोई स्पष्ट आश्वासन नहीं दिया और घोषणा की कि 'युद्ध के पश्चात जितना शीघ्र हो सकेगा, वेस्टमिनिस्टर जैसा प्रादेशिक स्वशासन देना अंग्रेजी सरकार का उद्देश्य होगा।' कांग्रेस स्पष्ट आश्वासन चाहती थी, जो वायसराय की घोषणा से नहीं मिल पाया। इस विरोध में कांग्रेस मंत्रिमंडल ने त्यागपत्र दे दिया। जिन्ना ने उसे मुक्ति दिवस के रूप में मनाया क्योंकि देश को कांग्रेस से छुटकारा मिल गया था।

दूसरी तरफ ब्रिटिश सेना को फ्रांस की जमीन पर करारी हार का सामना करना पड़ रहा था। अंग्रेजों ने भारतीयों से सहयोग के लिए अगस्त 1940 का प्रस्ताव रखा जिसमें वाइसराय ने घोषणा की ''भारत का संविधान स्वभावतः स्वयं भारतवासी ही तैयार करेंगे जो उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक धाराणाओं पर निर्भर होगा।'' इस प्रस्ताव की एक खास विशेषता यह थी कि उसने ब्रिटिश सरकार अल्पसंख्यकों को पूर्ण महत्त्व प्रदान करने की बात कही। इस आशय ने मुस्लिम लीग के मनोबल व राजनीतिक महत्त्वाकांक्षी को और आगे बढ़ाया। क्योंकि ब्रिटिश सरकार यह स्पष्ट कर चुकी थी ''भावी संविधान में अल्पसंख्यकों की सहमति आवश्यक है।'' कांग्रेस ने इस प्रस्ताव

का जहाँ अस्वीकार कर दिया वहीं मुस्लिम लीग इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए यह बात कही कि भारत का बँटवारा ही इस कठिन समस्या का समाधान है।

1937 का चुनाव: कांग्रेस और लीग की राजनीतिक जमीन

1937 के चुनाव में मुस्लिम लीग केवल 25 प्रतिशत सीटें जीत सका जो मुसलमानों के लिए आरक्षित थी। वही क्षेत्रीय मुस्लिम दल जैसे की पंजाब में सिकन्दर हयात खान के नेतृत्व में यूनियनिस्ट पार्टी और बंगाल ने कृषक प्रजा पार्टी ने अपना दबदबा कायम रखा। लगभग 69 प्रतिशत सीटे क्षेत्रीय मुस्लिम दलों का प्राप्त हुआ। कांग्रेस 6 प्रतिशत मुसलमानों के लिए सुरक्षित सीट पर अपना कब्जा कर पायी (हर्मन कलके और डाइट, पृ. 314)

1937 के अखिल भारतीय मुस्लिम लीग के सम्मेलन में जिन्ना व सिकन्दर हयात खान के बीच एक गुप्त समझौता हुआ। राष्ट्रीय स्तर पर मुस्लिम नेतृत्व जिन्ना ने अपने हाथ रखा, वही हयात खान को पंजाब में लीग के हस्तक्षेप से मुक्त कर दिया। मुस्लिम लीग पंजाब में मात्र 2 सीटें जीत पायी थी। 1940 के अगस्त प्रस्ताव के द्वारा जो युद्ध परामर्शदात्री परिषद का विस्तार हुआ था उसमें ब्रिटिश वायसराय ने फजलु हक और सिकन्दर हयात खान को जगह दी थी। परंतु 1942 में जिन्ना जो मुसलमानों का एक मात्र प्रतिनिधि राष्ट्रीय स्तर पर मानते थे उन्होंने उन दोनों नेताओं व ब्रिटिश सरकार को बाध्य किया कि उनका इस्तीफा स्वीकार करें।

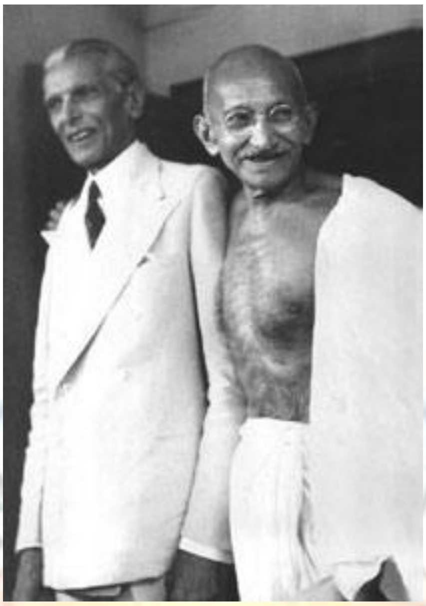

http://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/85/Gandhi_and_Jinnah_Bombay_1944.jpg

जापान के युद्ध में शामिल होने के कारण अंग्रेजों की चिंता और बढ़ गयी। ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने घोषणा की कि भारतीयों के जनभावना को ध्यान में रखते हुए और उनकी समस्याओं का समाधान के लिए उनसे विचार विमर्श के लिए सर स्टेफोर्ड क्रिप्स भारत जाऐंगे। क्रिप्स को यह आदेश था कि वह न केवल बहुसंख्यक हिन्दुओं से ही आवश्यक सहमति प्राप्त करें, अपितु सबसे अधिक बहुसंख्यक, अल्पसंख्यक जाति मुसलमानों से भी सहमति प्राप्त करें। 1942 आते आते यह स्पष्ट हो चुका था जिस राजनीति के तहत ब्रिटिश राजभक्ति को मुस्लिम लीग ने अपना अधिकार बनाया था इस अधिकार का इस्तेमाल कर मुस्लिम लीग अपने लक्ष्य को हासिल करे। गांधी इस बात को समझ चुके थे। मुहम्मद अली जिन्ना का मुसलमानों के बीच लोकप्रियता बढ़ रही थी और वह कायदे-ए-आजम के नाम से पुकारे जाने लगे थे। महात्मा गांधी क्रिप्स प्रस्ताव का 'उत्तरतिथीय चैक' की संज्ञा देकर खारिज कर चुके

थे। क्रिप्स प्रस्ताव के तहत युद्ध समाप्ति के उपरान्त एक संविधान सभा की स्थापना की बात कही गयी थी। साथ ही साथ जो सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी मुस्लिम लीग और जिन्ना के पाकिस्तान के मांग को लेकर वह भी पूर्ण होती दीख रही थी। ब्रिटिश भारत के किसी भी प्रांत या देशी रियासत के भारतीय संघ में सम्मिलित होने या अलग होने का अधिकार होगा। कांग्रेस स्पष्ट रूप से ब्रिटिश नीति को समझ चुकी थी। जिन्ना ने भी कांग्रेस के प्रस्ताव को खारीज करते ही लीग द्वारा भी इस प्रस्ताव को खारिज करवा दिया। 1944 आते आते गांधी और जिन्ना के बीच कई बैठकें प्रारंभ हुई। गांधी जिन्ना के पाकिस्तान की मांग से सहमत हो चुके थे। परंतु वह भारत और पाकिस्तान को एक रखने के लिए परिसंघीय ढांचा बनाने की बात कह रहे थे। जिन्ना इस बात की स्वीकार करने के लिए तैयार थे, परंतु उनकी शर्त थी कि वह पहले पाकिस्तान को स्वीकार करे। जिन्ना का मत था परिसंघीय योजना समान संघीय संरचनाओं के बीच होती है और जब तक पाकिस्तान एक संघीय राज्य नहीं बनेगा, भारत-पाकिस्तान एक परिसंघ की स्थापना नहीं हो सकती। यद्यपि जिन्ना-गांधी संवाद अपने लक्ष्य को हासिल नहीं कर सका (कलके, पृ. 316)

द्वितीय विश्वयुद्ध का समापन और सांविधानिक गतिरोध

25 जून 1945 को गवर्नर जनरल लार्ड वैवल ने भारत में द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरान्त के राजनीतिक स्थिति व संवैधानिक गतिरोध को दूर करने के लिए बैठक बुलायी। प्रस्ताव में गवर्नर जनरल की परिषद में गवर्नर जनरल और मुख्य सेनापति को छोड़कर सभी भारतीय सदस्य को रखने की बात कही गयी। परिषद में सवर्ण हिन्दुओं और मुसलमानों को बराबर-बराबर स्थान दिया गया। परंतु जिन्ना इस बात पर अड़े रहे कि मुस्लिम लीग को ही समस्त

मुसलमानों को प्रतिनिधि माना जाए। जिसे न तो ब्रिटिश सरकार स्वीकार करने के लिए तैयार थी, न ही कांग्रेस और अन्य मुस्लिम क्षेत्रीय दल। जिन्ना यह जानते थे कि यदि इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया जाए तो उनके पास कांग्रेस के नेतृत्व को स्वीकार करने के अलावा दूसरा कोई विकल्प नहीं बचा था। अपनी राजनीतिक कुशलता को जिन्ना ने पुनः सिद्ध कर दिया। जिन्ना द्वारा वेवल प्रस्ताव को विफल करवा देना, उनकी राजनीतिक जीत थी। अवाम में यह स्पष्ट हो चुका था कि मुसलमान का एक ही नुमाइंदा होगा और वह कायदे -ए-आजम होगा। क्षेत्रीय मुस्लिम दल भी इस बात को स्वीकार करने लगे थे। 1945 के इंग्लैंड के चुनाव में श्रमिक दल सत्ता में आ चुकी थी। वेवल कंजरवेटिव पार्टी के नुमांइदा थे। वेवल ने जिन्ना के जिद्द को तोड़ने के लिए एक 'Break Down Plan' बनाया जिसका मकसद, एक ऐसे पाकिस्तान की गठन को स्वीकार करना था जो पंजाब और बंगाल के मुस्लिम बहुल जिला हो। वेवल ने इस योजना की कार्यवाही की धमकी पंजाब के चुनाव के उपरान्त दी थी। परंतु ऐटली की सरकार ने इसी बीच भारत में साम्राज्य संसदीय शिष्ट मंडल भेजने को सुझाव दिया। उससे पूर्व एटली की सरकार ने यह घोषणा की थी कि भारत में केन्द्रीय तथा प्रांतीय चुनाव कराये जाएँगे। सितम्बर 1945 में यह भी कहा गया कि चुनाव के तुरन्त पश्चात भारत का संविधान बनाने के लिए भिन्न-भिन्न राजनीतिक दलों की सहायता से एक सभा गठित की जायेगी।

1945-46 के इस आम चुनाव में जहाँ कांग्रेस लगभग सभी अमुस्लिम स्थान पर जीत हासिल की वहीं मुस्लिम लीग ने मुसलमानों के लिए आरक्षित 90 प्रतिशत सीट पर अपनी जीत हासिल कर यह स्पष्ट कर दिया कि भारत में

मुसलमानों का प्रतिनिधित्व एक मात्र राजनीतिक दल अखिल भारतीय मुस्लिम लीग करता है।

मंत्रिमंडलीय शिष्टमंडल और विभाजन की सौदेबाजी

भारत की स्वतंत्रता के जटिल प्रश्न के समाधान हेतु मार्च 1946 में ब्रिटिश कैबिनेट का एक प्रतिनिधिमंडल भारत आया था, जो कैबिनेट मिशन के नाम से प्रसिद्ध हुआ। चूंकि लीग और कांग्रेस के बीच एकता अथवा बँटवारे को लेकर समझौता नहीं हो सका, इसलिए शिष्टमंडल ने अपनी और संवैधानिक समस्या का हल प्रस्तुत किया। साथ ही साथ लीग द्वारा पाकिस्तान की मांग को खारिज शिष्टमंडल द्वारा खारिज कर दिया गया। शिष्टमंडल का तर्क था कि पाकिस्तान बनने से उन अल्पसंख्यकों की समस्या का हल नहीं होगा जो मुसलमान नहीं हैं। इनकी संख्या उत्तर पश्चिमी क्षेत्र जो आज का वर्तमान पाकिस्तान है उसकी कुल संख्या के 37.93 प्रतिशत था और उत्तर पूर्वी क्षेत्र जो वर्तमान का बांग्लादेश के वहाँ अल्पसंख्यकों की संख्या 48.8 प्रतिशत थी। दूसरा पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान की दूरी 1000 किलोमीटर की थी और दोनों भागों के बीच संचार व्यवस्था भारतीय सदभावना पर आधारित होती। इन कठिनाइयों को देखते हुए शिष्टमंडल ने पाकिस्तान की मांग को खारिज कर दिया। उधर ब्रिटिश व्यवस्था पतनोन्मुख हो रही थी। लार्ड वेवल चाहते थे शीघ्रातीशीघ्र भारत में अंतर्गत सरकार का गठन कर दिया जाए और ब्रिटिश व्यवस्था की जिम्मेदारी कम कर दी जाए।

शिष्ट मंडल ने अपने सुझाव में संपूर्ण भारत का एक संघ बनाने की बात कही जिसके तहत अंग्रेजी भारत और रियासतों का मिला-जुला भाग हो। किसी महत्त्वपूर्ण सांप्रदायिक पक्ष पर यह आवश्यक था कि विधानमंडल में दोनों

मुख्य संप्रदाय के विधायक अलग-अलग मत देकर समर्थन करे। यह प्रावधान विशेषकर पंजाब के बंगाल जैसे प्रांतों को ध्यान में रखकर किया गया था। तीसरा प्रांत को केन्द्रीय विषय छोड़कर शेष सभी मामलों में पूर्ण स्वायत्तता हो। चैथा, मद्रास, बम्बई, मध्यप्रान्त, संयुक्त प्रांत, बिहार और उड़ीसा के छः हिन्दु बहुसंख्यक प्रांत गुट (क) में होंगे, गुट (ख) में उत्तर पश्चिम के मुस्लिम बहुसंख्यक प्रांत विशेषकर पंजाब, उत्तर पश्चिमी सीमा प्रांत और सिन्ध होंगे। बंगाल और असम को गुट (ग) में रखा गया। पाँचवीं जो महत्त्वपूर्ण बात कही गई वह थी प्रांतों को छांटे अथवा बड़े गुट बनाने के अधिकार होंगे और इसका निर्णय वह स्वयं करेंगे।

मंत्रि-मंडलीय शिष्टमंडल को संविधान बनाने का कार्य आरंभ करना था। संविधान सभा के सदस्य प्रांतीय विधान परिषद के माध्यम से आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के द्वारा चुनी जानी थी। सदस्य संख्या को तीन भागों में बांट दिया गया था, सामान्य मुस्लिम और सिख और प्रत्येक भाग अपना प्रतिनिधि स्थापित प्रक्रिया से चुनना था। भाग (क) से 167 स्थान सामान्य को और 20 स्थान मुसलमान को। गुट (ख) में सामान्य को 9, मुसलमान को 22 और सिक्खों को 4 तथा गुट (ग) में सामान्य को 34 और मुसलमान को 36 स्थान दिए गऐ थे। इन 292 सदस्यों में से 4 सदस्य 4 मुख्य आयुक्तों के प्रांतों से आते थे। और 93 सदस्य भारतीय रियसतों से आने थे।

तीनों गुट को अपने-अपने भाग के लिए अलग अलग संविधान बनाना था। साथ ही साथ उन्हें यह भी अधिकार दिया गया था कि वह संविधान अपने गुट के लिए बनाये या न बनाये। अंत में तीनों गुट को मिलकर संघीय संविधान की रचना करनी थी। संविधान सभा के चुनाव में सामान्य के 214 सीटें में कांग्रेस को 205 स्थान पर सफलता मिली। वही मुस्लिम लीग 78 मुसलमानों के लिए

आरक्षित सीट पर 73 स्थान पर विजय हासिल किया। जिन्ना का यह अनुभव होने में देरी नहीं हुई कि 296 सदस्यीय संविधान सभा में मुस्लिम लीग के पास मात्र 73 सदस्य होंगे और वह राजनीतिक रूप से अप्रसांगिक हो जायेगा। जिन्ना ने कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव को खारिज करते हुए एक सीधी कार्यवाही का प्रस्ताव पास करवाया जिसमें उसने अंग्रेजों और कांग्रेस दोनों को धोखेबाज कहा और कहा कि समय आ गया है कि पाकिस्तान की प्राप्ति के लिए वे सीधी कारवाई करे। कार्यकारिणी का कार्यक्रम बनाने को कहा गया और अगस्त 16 को 'सीधी कार्यवाही दिवस' निश्चित किया गया।

बंगाल में मुस्लिम लीग की सरकार थी। प्रत्यक्ष कारवाई के नाम पर सांप्रदायिक दंगे की शुरूआत जो कलकत्ता से प्रांरभ हुई और जिसका असर नोंआखोली, टिप्पहाड़, बिहार, व अन्य जगहों पर देखने को मिला और उसका अंत माउंटबैटन योजना के द्वारा हुआ।

3 जून 1947 का विभाजन का रणनीति

कैबिनेट मिशन की विफलता, पाकिस्तान की बढ़ती माँग कांग्रेस द्वारा गांधी की राजनीति की अनदेखी व कांग्रेस के नेताओं द्वारा पाकिस्तान की अपरिहार्यता को स्वीकार करने के उपरांत माउंटबैटन ने भारत के विभाजन की रणनीति को अंतिम स्वरूप् प्रदान किया। इस योजना के द्वारा दो अधिराज्यों भारत और पाकिस्तान का विभाजन कर स्वतंत्र राज्य का दर्जा प्रदान कर दिया गया। पंजाब एवं बंगाल का विभाजन कर दिया गया और असम, सिलहट व उत्तर पश्चिमी सीमा प्रांत में जनमत संग्रह करवायी गयी उन्हें भारत या पाकिस्तान में सम्मिलित होने के निर्णय दिया गया। देशी रियासतों

को भारत या पाकिस्तान में सम्मिलित होने या स्वतंत्र बने रहने का अधिकार दिया गया।

निष्कर्ष

क्या विभाजन अनिवार्य था ? इतिहासकार और राजनीतिक विश्लेषक इसकी व्याख्या अलग-अलग ढंग से करते हैं। परंतु गांधी का 4 जून 1947 को प्रार्थना सभा में दिया गया वक्तव्य कि ''विभाजन जनता की मांग थी जिसे कांग्रेस ने स्वीकार किया। कांग्रेस ने कभी विभाजन की मांग नहीं की थी, अपितु जनता ने इस मांग को स्वीकार करने के लिए गांधी ने कांग्रेस को प्रेरित किया।'' स्पष्ट करता है कि भारतीय जनमानस इस बात को स्वीकार कर चुकी थी कि यदि इस क्षेत्र में शांति और स्थिरता चाहिए तो विभाजन अपरिहार्य है। गांधी इस बात को स्वीकार कर चुके थे कि मुस्लिम लीग की सांप्रदायिक राजनीति ने इस देश के जनमानस के भीतर यह बात सुनिश्चित कर दी थी कि यदि स्वतंत्रता से भी बड़ा प्रश्न का हल ढूँढ़ने की आवश्यकता है तो वह सांप्रदायिक समस्या के हल का। जब तक इस समस्या का हल नहीं हो जाता स्वतंत्रता का कोई अर्थ नहीं रह जाता। स्वभावतः चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान या खालसा सभी इसी प्रश्न पर विचार कर रहे थे कि क्या विभाजन अपरिहार्य है ? आजादी के एक वर्ष पूर्व की सांप्रदायिक दंगों ने इस सोच को ओर मजबूत किया और सभी धर्मावलंबी के लोग यह स्वीकार कर चुके थे कि विभाजन के अतिरिक्त इस समस्या को कोई समाधान नहीं है। यद्‌यपि अबुल कलाम आजाद इस बात को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे। अपनी पुस्तक इंडिया विन्स फ्रीडम में उन्होंने विभाजन के लिए नेहरू को उत्तरदायी ठहराया है। परंतु क्या यदि 1937 में कांग्रेस -मुस्लिम लीग के साथ मिलकर गठबंधन सरकार बना लेती तो मुस्लिम लीग अपनी सांप्रदायिक राजनीति छोड़ देता?

शायद आजाद लीग के वैचारिक आयाम पर विचार न कर केवल तात्कालिक राजनीतिक परिस्थिति पर विचार कर पा रहे थे। मंत्रिमंडलीय शिष्ट मंडल द्वारा पाकिस्तान की मांग खारिज कर देने के उपरान्त भी जिन्ना क्या पाकिस्तान की मांग के प्रति सजग नहीं थे। आजाद की सोच यह थी कि यदि कांग्रेस शिष्ट मंडल के घोषणा को स्वीकार कर लेती और वर्गीकृत राज्यों के सम्मिलन पर जोर नहीं देती तो शायद विभाजन रूक जाता। लेकिन जनमानस का कमान स्पष्ट रूप से पाकिस्तान के स्थापना की ओर था। बंगाल और पंजाब दो सार्वधिक मुस्लिम बहुल क्षेत्र जहाँ 1937 के चुनाव में मुस्लिम लीग एक सतही राजनीतिक दल थी, वह 1945-46 के चुनाव में प्रमुख दल बन गई। जिस राजनीतिक दल की पूरे भारत में 10 साल पूर्व हुए चुनाव में केवल 4.8 प्रतिशत मत आया था, वह 1945-46 के चुनाव में 76 प्रतिशत मत के साथ मुसलमानों को एकमात्र राजनीतिक दल बन गया। बंगाल में 83.6 व पंजाब में 65.4 प्रतिशत मुसलमानों का मत हासिल कर अखिल भारतीय मुस्लिम लीग ने यह सिद्ध कर दिया था कि इस देश के मुसलमान क्या चाहते हैं। 78 सुरक्षित स्थानों में 73 पर जीत हासिल कर ब्रिटिश सरकार को स्पष्ट संदेश दिया जा चुका था कि 1940 का लाहौर अधिवेशन का वह प्रस्ताव अन्तर समुदायात्मक सौहार्द और शांति के लिए पाकिस्तान आवश्यक है। अतः ब्रिटिश व्यवस्था व कांग्रेस कार्यसमिति ने भी इसे स्वीकार कर दो अधिराज्यों के अस्तित्व को मान्यता प्रदान कर दिया।

शब्दावली

पाकसिया	पाक संस्कृति का ऐतिहासिक क्षेत्र

ओस्मानिस्तान	दक्कन का हैदराबाद क्षेत्र
दीनीया	पुराने भारत के भाग्य के अर्थ में
बंगिस्तान	बंगाल, असम और ओस्मानिस्तान का क्षेत्र
पाकिस्तान	पंजाब, कश्मीर, सिंध, उत्तर पश्चिमी सीमा प्रांत व बलूचिस्तान का क्षेत्र

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारत के विभाजन पर इतिहासकारों के विचारों का उल्लेख करते हुए दो राष्ट्रवाद का सिद्धांत का विश्लेषण करें।
2. लाहौर अधिवेशन क्या था ? क्या भारत का विभाजन लाहौर अधिवेशन के कारण हुआ ?
3. ब्रिटिश भारत के शासन व्यवस्था के बांटो और राज करो की नीति भारत के विभाजन के लिए कहाँ तक जिम्मेदार है ? अपने पक्ष के संदर्भ में तर्क दें।
4. क्या विभाजन अपरिहार्य था ? आलोचनात्मक मूल्यांकन करें।

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. द्विराष्ट्र का सिद्धांत क्या है ?

2. रहमत अली की वैचारिक संकल्पना पर टिप्पणी लिखें।

3. माउंटबैटन प्लान क्या था ?

4. मंत्रीमंडलीय शिष्टमंडल द्वारा राज्यों को वर्गीकृत करने की योजना क्या थी ?

5. वेवल प्रस्ताव क्यों असफल हो गया ?

6. कांग्रेस मंत्रिमंडल द्वारा त्यागपत्र को मुस्लिम लीग ने मुक्ति दिवस के रूप में क्यों मनाया ?

संदर्भ

कौशिक राय, (सं.) (2012), पार्टिशन आफ इंडिया: वाई 1947 ? आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली

आयशा जलाल, (1944), द सोल स्पोक्समैन: जिन्ना, द मुस्लिम लिग एंड द डिमांड फार पाकिस्तान, कैम्ब्रिज, सीयूपी

मौलाना अबुल कलाम आजाद (1995), इंडिया विन्स फ्रीडम, नई दिल्ली

हर्मन कुलके एंड डाइटमार रौदरमंड, (1998), ए हिस्ट्री आफ इंडिया, रूटलेज, लंदन

स्टेन्ली वोलपोर्ट, (2006), शेमफुल फ्लाइट: द लास्ट ईयर्स आफ द ब्रिटिश इंपायर इन इंडिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू यार्क

लैरी कोलिन्स एंड डोमनिक लपायर (1984), माउंटबैटन एंड इंडिपेंडेंट इंडिया, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली

ज्ञानेन्द्र पाण्डे, (2001), रिमेम्बरिंग पार्टिशन, कैम्ब्रिज, सीयूपी, नई दिल्ली

बी. एल ग्रोवर व यशपाल (1990) आधुनिक भारत का इतिहास: एक नवीन मूल्यांकन (एस. चन्द एण्ड कम्पनी) नई दिल्ली